पुरोवाकू

वास्तव में वैदिक साहित्य वेदों से निःसृत एक अश्यन्तिधि है। इसमें भारतीय संस्कृत और सम्प्रदाय के विकास का क्रम, उसकी सत्या और स्थिति का सम्पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। कब-कब और कौन-कौन सी स्थितियाँ किन-किन मान्यताओं को लेकर जन जीवन को अपने में आवश्यक किये रहने? किस प्रकार यहाँ का विस्तार होता है? कैसे-कैसे आर्थिक सत्यता भारत वर्ष में फैल गयी? उसके विस्तार, प्रचार-प्रसार के लिये आर्थिक स्थितियों का क्रय-रण करना पड़ा, इन समस्त विषयों का उल्लेख भी वेद के अनुस्मृतियों से निकलाया जा सकता है। आर्थिक जातियों के प्रभाव से बचने के लिये जो भी प्रयास किये गये उनका क्रम भी वेदों में निहित है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वैदिक साहित्य भारत की आर्थिक और हिन्दू जनता को जीवित रखकर उसे अनुप्राणित करने का कार्य करता है। उसका अनुस्मृतियों भी वेद में निहित है। वेदों के विषय में कहा गया है कि जिस प्रकार लोकिक तत्वों के साथकार के लिये नेत्र आवश्यक है, उसी प्रकार अलिकिक तत्वों के रहस्य-ज्ञान हेतु वेद आवश्यक है। इनके हिस्ट्र प्रतिव तथा अनिष्ठ-परिहार के अलिकिक उपयोगों का निर्धारण होता है।

वेदों की संख्या चार है- (1) ऋषिवेद, (2) यजुर्वेद, (3) सामवेद, (4) अथर्ववेद। तथा वेद के संस्कारणार्थ तथा स्वरूप ज्ञानार्थ के लिये वेदांग साहित्य का प्रणयन किया गया है अंग शब्द का व्यूत्तितिपर पर्य अर्थ है- 'उपकारक' - 'अथर्वते भाष्यन्ते अभिमोकित' अंगानि। अयोध्य जिनके द्वारा किसी वस्तु के स्वरूप का सम्पूर्ण ज्ञान हो। अतएव वेदार्थ ज्ञानले तथा उसके कर्मकाण्ड प्रतिपादन में इस प्रकार की सहायता देने में जो उपयोगी शास्त्र है उन्हें वेदांग कहा जाता है। वेदों के यथार्थ ज्ञान के लिये च: विषयों (शिश्या, कल्प, निरुत्त, व्याकरण, छन्द, ज्योतिषु), की निर्दिष्ट आवश्यकता है। वेद मनो के विशुद्ध उच्चारण प्रथम आवश्यक विषय है इसके लिये शिश्या वेदांग विहित है।

इसी को व्यूत्तितियाँ हैं-

(1) शिश्यति या सा शिशा।

(2) शक्तुः शक्तो भवितुमिच्छा शिशा।

इसके विषय में ऋषिवेद भाष्य भूमिका में कहा गया है- 'स्वर्गवाणी ज्ञानार्थ प्राप्तको यथा शिक्षते उपदिश्यते सा शिशा'।
अतः आज से हजारों वर्ष पूर्व वेदिक परम्परा में जिस प्रकार का शुद्ध उच्चारण किया जाता था, सम्प्रति भी उसी रूप में इन मन्त्रों का उच्चारण हो रहा है। यह शिक्षा का प्रभाव है इसके 4: अंग है जिनका उल्लेख तैत्तिरियोपनिषद् की शिक्षावल्ली में किया गया है—

३० शिक्षावल्ली— 1/2

अर्थात् वेदांग शिक्षा अथोलिखित यदि अंगों वाली है—

1. अकारादि वर्ण।
2. उदात्त, अनुदात, स्वरितादि स्वर।
3. हस्त, दीर्घ, व्युतक्रम मात्राएँ।
4. वर्णों के उच्चारण स्थान एवं प्रयल रूप बल।
5. सुस्पष्ट एवं सुन्दर उच्चारण रूप साम।
6. सन्धि रूप सन्धान।

इनको आधार बनाकर शिक्षा अन्यों की रचना की गई है। ये ध्यन विज्ञान की आधारशिला है इसी लिये कुछ प्राचीन समीक्षको द्वारा इसे ध्यन शास्त्र कहा गया है। इनके दो रूप हैं—

1. प्रातिशाख्य ग्रन्थ
2. शिक्षा—साहित्य

प्रातिशाख्यों के अन्तर्गत— ऋणकृ प्रातिशाख्य, वाजसनेय प्रातिशाख्य, तैत्तिरिय प्रातिशाख्य, सामवेदीय प्रातिशाख्य, (पुष्पसून, ऋणकृ तन्त्र आदि) अथवावेदीय प्रातिशाख्य (शौकिय चतुराध्यायिक, अथवावेद प्रातिशाख्य) आदि आते हैं।

शिक्षा— साहित्य में अथोलिखित शिक्षाएँ आती है—

1. पाणिनीय शिक्षा
2. व्यास शिक्षा
3. भर्त्राज शिक्षा
4. वाशिष्ठी शिक्षा
5. पराशरी शिक्षा
6. याजवल्क्य शिक्षा
7. कापियानी शिक्षा
8. माण्डव्य शिक्षा
9. माध्यमिनी शिक्षा
10. अमोघनन्दिनी शिक्षा
(11) वर्णरत्नप्रदीपिका    (12) केशवी शिश्न
(13) मल्लभर्म शिश्न    (14) स्वरांकन शिश्न
(15) योगशलोकी शिश्न    (16) अवसान निर्णय शिश्न
(17) स्वरभवित लक्षण शिश्न    (18) प्रतिष्ठान्य प्रदीप शिश्न
(19) नारदीय शिश्न    (20) मण्डूकृत शिश्न

इस प्रकार शिश्न-साहित्य अत्यन्त विशाल है। इन शिश्नाओं में याज्ञवल्क्य शिश्न का सम्बन्ध शुक्ल बुद्धिक से उपरणीय सिद्धांत से है। इसका परिभाषण स्वतंत्र है। इसके लक्षण की संख्या 232 है। इसमें वैदिक स्वरों का साहित्यविश्लेषण तथा विश्लेषण वर्णन किया गया है। इसमें वर्ण समूह को भागों में विभाजित कर स्वर, स्वर्ण, अन्तर्वष और उच्च इस रीति से वर्णों का प्रतिपण्डित किया गया है। स्वरों के विचार के पश्चात इसमें लोप, आगम, विकार तथा प्रकृतिभाव इन चार प्रकार की संख्याओं का विश्लेषण वर्णन किया गया है तथा वर्णों के विचेत स्वरस्तर परस्पर साम्य और वैष्णव आदि जनों का विश्लेषण सारांश में विषयकों करने का विनत उपक्रम किया है। इस श्रेष्ठ-प्रबंध को परिपूर्ण और समाधान प्रदान करने का विनम्र प्रयास किया है।

याज्ञवल्क्य शिश्न एक परिशीलन श्रेष्ठ-सम्पादन में मैं अपने निर्देशिकाएं डा० गायत्री अग्रवाल संस्कृत सम्भावित ग्रंथ संसार सुकृत लाल सानकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय अयोध्या, कैलाशावास को आप के योगदान एवं अनुभवाय निर्देशन के लिए धन्यवाद देती हूँ एवं बहुत से आप को आभार प्रकट करती हूँ। आपने संजय एक नया जीवन प्रदान किया है। आप के ही प्रयासों के परिष्कार स्वरूप यह शोधकार्य सम्पन्न हो सका। अतः मैं अपने शोधकार्य का सम्पूर्ण श्रेय आप के प्रति अपनी प्रणाम सम्पूर्ण कृतांशा आर्पित करती हूँ। समान्य डॉ. हरिश्चन्द्र मिश्र अवकाश प्राप्त प्रवक्ता नवायें दन्तधावन कुंठ, अयोध्या (कैलाशावास) की मैं वास्तविक अनुसार हूँ, जिन्होंने निःस्वार्थ अपना बहुमूल्य समय देकर अपने श्लाघिनी साहित्यिक ज्ञान से इस श्रेष्ठ की भाषा-शैली एवं अन्य शिश्न साहित्य विषय विवेचना पर मेरा पथ प्रदर्शण कर इसे सम्पन्न करने में अविश्वसनीय योगदान दिया है। अतः मैं अपने शोध कार्य का श्रेय अपने गुरुत्वों को गुरुदेश्तिया स्वरूप आर्पित करती हूँ और गुरु-माता श्रीरती श्रीकृतलाला देवी भी धन्यवाद और कृतज्ञता की पात्र हैं, जो गुरु जी के व्यस्ततम क्षणों में
भी मेरे लिए समय देने का ठहर किया करती थी।

मेरे सहयोगी भाई डॉ. राम जी अग्रवाल, संस्कृत विभागाध्यक्ष, शिवनाथ वर्मा स्मारक पी.जी.0 कॉलेज (खानपुर पिलाई) देवनगर, सुलतानपुर ने मुझे समयानुसार विषयन्त सामग्री उपलब्ध कराकर अपने प्रौढ़ साहित्यिक ज्ञान तथा अनुभवगत अनुभव सुझाओं से शोधकार्य सम्पादन में पूर्ण सहयोग देकर मुझे लाभान्वित कराया है।

मेरे देवलुत्प दिता श्री मयाराम विश्वकर्मा एवं ममतामयी माता श्रीमती इंद्राक्षी देवी, ज्येष्ठ भारता नन्दलाल व प्रिय अनुज चन्द्रलाल तथा मेरी बहन श्रीमती शोभा विश्वकर्मा एवं परिवार के अन्य सभी सदस्य भी यहाँ स्मरणीय एवं कृतज्ञता योग्य प्रणाम हैं, जिन्होंने मुझे पारिवारिक झंझटों एवं अन्य कार्य व्यापार की व्यस्तता से मुक्त कर शोधार्थ प्रगति किया। अन्ततः मैं उन सभी विद्वानों की ऋणी हूं, जिनके प्रति को पढ़कर अथवा जिनका मार्ग दर्शन पाकर मैं इस शोध रूप गुरुत्व कार्य को सम्पन्न कर सकी। जिनकी रचनाओं से मैं लाभान्वित हुई हूं और जिनकी शुभकामनाओं से याज्ञवल्क्य शिक्षा एक परिशीलन सम्पादित हो सकी। अन्त में शोध प्रबंध तंत्र में मेरे सहयोगी श्री शैलेन्द्र खुमार पाण्डेय जी एवं धर्मेन्द्र खुमार पाण्डेय जी का विशेष योगदान रहा जिनके सहयोग से मेरा शोधकार्य पूरा हो सका एवं समापन हेतु सभी सहयोगियों की मेरा धन्यवाद।

कालिदास के शब्दों में ‘सरस्वती शृङ्खलकृति महीयताम्’ और किसी समुपासक के शब्दों में "भारते भारुमार्थी संस्कृतम्" सुमधुर देववाकु की शुभाशिष्ट संस्कृत के प्रचार-प्रसार का प्रति लेती हूं।

निरुपांवांवाद

(सीमा)